ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
ISSN No.: 2347-2944, *RNI:UPBIL04292,REG.No.:561/2013-14 Vol.-I, No.-1,* **PP-56-62**, *YEAR 2014*

भारतीय लोकतांत्रिक राजनीति के विविध आयाम

(16वीं लोक सभा का चुनावी विश्लेषण)

❑ डॉ0 ममता मणि त्रिपाठी*

सन् 1950 से भारतीय संविधान लागू किए जाने से लेकर सन् 2014 तक 16 लोकसभा चुनाव हुए। इन सभी चुनावों का विश्लेषण किया जाए तो यह स्पष्ट हो जाएगा कि किस तरह से एक दल समर्पित लोकतंत्र से लेकर समाजवाद, लोक लुभावनी राजनीति, मण्डल कमण्डल, बाजार, ब्लैकमेलिंग की राजनीति, गिफ्ट राजनीति, धन, बल, बाहुबल, धर्म और जातिगत राजनीति के रूप में रूपान्तरित होती रही है। प्रस्तुत शोध पत्र में इन्हीं बदलते आयामों का विश्लेषण किया गया है, इसके अलावा भारतीय राजनीति में व्याप्त तमाम चुनौतियों का अवलोकन किया गया है। यही नहीं नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में भारतीय जनता पार्टी के नए अवतरण के कारणों का भी विश्लेषण किया गया है।

एक सफल लोकतांत्रिक शासन प्रणाली के लिए अनुकूल वातावरण होना बहुत आवश्यक होता है क्योंकि सरकार के जितने स्वरूप होते हैं उसका निर्धारण समाज के द्वारा ही होता है। अर्थात इसका प्रभाव सबसे ज्यादा लोकतांत्रिक सरकार पर पड़ता है। यह शासन मूल रूप से जनसहभागिता पर आधारित होती है जिसके निर्वाचन प्रणाली में हर व्यक्ति को महत्व मिलता है ऐसी स्थिति में यह आवश्यक हो जाता है कि जनता वांछनीय एवं अवांछनीय के अंतर को पहचाने। लोकतंत्र को परिभाषित करते हुए यह कहा जा सकता है कि यह ऐसी शासन प्रणाली है जिसमें सर्वोच्च सत्ता जनता के पास होती है यह राजतंत्र तथा कुलीनतंत्र से अलग होती है। लोकतंत्र के आवश्यक घटक हैं– उचित जन शिक्षा प्रबुद्ध जनमत, संगठित राजनीतिक दल शासन में नागरिकों का सक्रिय भाग और सर्तकता, जनता में सहिष्णुता, एकता और आर्थिक सुरक्षा की भावना। इस तरह से इन घटकों में से 'प्रबुद्ध जनमत' घटक जिसका आधार मतदान होता है, को लोकतंत्र का प्रमुख अवयव माना जाता है।

आधुनिक लोकतंत्र मुख्यतः कुछ मूल्यों और प्रक्रियाओं पर आधारित हैं जिसमें कानून का शासन, नागरिक अधिकार, न्यायालय की स्वायत्ता कानून के सामने बराबरी का अधिकार इत्यादि शामिल है। भारतीय संविधान निर्माताओं ने भी इन्हीं मूल्यों को स्थापित करने के लिए तमाम विषमताओं के बावजूद लोकतंत्र को ही अपनाया। प्रारम्भिक भारतीय राजनति में लोकतंत्र मुख्यतः अभिजन के रूप में परिलक्षित थी लेकिन वर्तमान भारतीय राजनीति में लोकतंत्र अभिजन से लेकर नीचे की ओर प्रवाहित होती नजर आ रही है जिसके कारण भारतीय राजनीति की दशा एवं दिशा परिवर्तित होती रही है। इन परिवर्तित आयामों का विश्लेषण इस प्रकार किया जा सकता है–

1. नेहरू युग (शासन स्वरूप कांग्रेस प्रणाली)
2. लोकलुभावन की राजनीति (समाजवादी विचारधारा)
3. मण्डल कमण्डल और बाजार (जाति, धर्म, उदारीकरण)
4. गठबंधन की राजनीति (राष्ट्रीयता बनाम क्षेत्रीयता, दबाव की राजनीति)
5. विकास और नेतृत्व (पूजीवाद बनाम लोकतंत्र)

भारतीय राजनीति का पहला दौर नेहरू युग था यह काल निर्देशित लोकतंत्र की श्रेणी में आता था। पहले लोकसभा चुनाव में (1952) मतदान 46 प्रतिशत था जो सन् 1962 के तीसरे आम चुनाव में बढ़कर 55 प्रतिशत

*वरिष्ठ प्रवक्ता राजनीतिशास्त्र एस0बी0एम0पी0जी0 कालेज, फाजिलनगर, कुशीनगर, उ0प्र0

तथा 1967 के आम चुनाव में 61 प्रतिशत हो गया। इस दौर के चुनाव में जो भी मतदान हुए कांग्रेसी शासन के कामकाज के संदर्भ में ही किया गया। क्योंकि एक दल प्रभुत्ववाली व्यवस्था ने बहुदलीय व्यवस्था की नर्सरी के रूप में काम किया। इस समय अभिजनों की राजनीति में वृद्धि हुई, फिर भी भारतीय लोकतंत्र अपनी शैश्वाकाल को एक बेहतर डिजाइन (आकार) उसके कौशलपूर्ण क्रियान्वयन और कुछ सौभाग्य के चलते अपने आपको बचाने में सफल रहा।

दूसरे दौर में आते–आते कांग्रेस के एकाधिकार को चुनौतियॉ मिलनी शुरू हुई। 1967 के आम चुनाव में पिछड़े वर्गों ने मतदान में बढ़चढ़कर भाग लिया। एक तरह से यह दौर भारतीय लोकतंत्रीकरण की शुरूआती दौर था जिसके कारण कांग्रेस को बहुमत प्राप्त हुआ। कामराज तथा एस0के0 पाटिल जैसे कांग्रेसी नेता को हार का सामना करना पड़ा। इस चुनावी दौर में कई घटनाएँ घटित हुई जिसके कारण सत्ता के चरित्र में गुणात्मक परिवर्ततन हुआ। 1969 तक आते–आते भारतीय कांग्रेस दो भागों में बॅट गयी संगठन में क्षेत्रीय नेताओं का वर्चस्व बढ़ गया। 1971 में इंदिरा गॉधी ने लोकलुभावनी राजनीति की शुरूआत की और नारा दिया 'गरीबी हटाओ' यह दौर राजनीतिक संस्थाओं की कमजोरियों को भी सामने लाया जिस तरह से सामाजिक ताकतों का गठबंधन उसका समर्थन आधार बन गया इस गठबंधन में दलित आदिवासी मुसलमानों इत्यादि वर्गों का प्रतिशत ज्यादा था। दक्षिण और पश्चिम में खासतौर पर दलित नेताओं ने पहली बार में सत्ता तक पहुॅचने में सफलता हासिल की। इस काल में पूर्व राजाओं के प्रिवीयर्स को समाप्त किया गया। इस दौर की राजनीति लोकलुभावन राजनीति के रूप में परिणित हो गयी। इंदिरा गॉधी की गरीबी हटाओ की विचारधारा, जनता पार्टी की अन्त्योदय योजना, कृषि उत्पाद के लिए उचित दाम देने की चौधरी चरण सिंह की मॉग, गरीबों की सस्ती दर पर चावल और साड़ी देने वाली नंदभूरि तारक रामराव की नीति, किसानों के बकाया खर्च को माफ करने का चौधरी देवी लाल का नीति ये सब भारतीय लोकलुभावन सामाजीकरण के विभिन्न उदाहरण हैं।

इस दौर की लोकलुभावन राजनीति के कारण इंदिरा गॉधी की शक्ति में वृद्धि हुई, वह सत्ता में आते ही तानाशाही प्रवृत्ति की ओर अग्रसर होने लगी जिसके कारण लोकतांत्रिक संस्थानों में ह्रास हुआ और आपात काल का ग्रहण देश की लोकतांत्रिक प्रक्रिया को ग्रसित कर लिया।

वास्तव में जनमत संग्रह की दो दशकीय राजनीति ने लोकतंत्र के स्थानीय चरित्र को कमजोर कर दिया। यही कारण है कि एक नयी अवधारणा का विकास हुआ कि उन मुद्दों को उठाया गया जो न तो राजनीति की मुख्य धारा में आज तक नहीं व्यक्त हो पायी और न ही उन्हें जगह मिली। एक तरफ राष्ट्रीय राजनीतिक समुदाय की रचना हुई तो दूसरी तरफ क्षेत्रीय एवं जातीय राजनीति की शुरूआत भी हुई। 1977 के आम चुनाव में सत्ता के बेदखल होने के बाद इंदिरा गॉधी 1978 के आम चुनाव में पुनः सत्ता में प्रचण्ड बहुमत के साथ वापसी करती हैं लकिन 1984 में उनकी हत्या के उपरांत आम चुनाव ने राजनीतिक घटनाओं के स्वाभाविक प्रवाह को रोककर एक नये दौर की शुरूआत करती है। इस दौर के राजनीति के प्रमुख घटक मण्डल–कमण्डल और बाजार बनते हैं यह दौर 1990 के आस पास शुरू होता है इस दौर में राजनीति इन तीनों घटकों के इर्द गिर्द घूमती रहती है। वर्षों से धूल फॉकती मण्डल आयोग की रिपोर्ट की सिफारिशों को वी0पी0 सिंह सरकार ने लागू किया जिस पर पूरे विश्व में विरोध की लहर शुरू हुई। इस विरोध की लहर को हिंदुत्व में ध्रुवीकरण करने के लिए भाजपा ने कमण्डल यानी मंदिर मुद्दा का सहारा लिया। इन दोनों घटकों के विपरीत कांग्रेस राजनीति ने मार्केट अर्थात उदारीकरण की प्रक्रिया की शुरूआत करके पूॅजी निवेश के सभी मार्ग को खोल दिया।

राजनीति के नये व्यापारियों ने अपनी राजनीति बाजार में लोकलुभावनी माल उतारना शुरू कर दिया और मतदाता एक राजनीतिक ग्राहक बन गया। इस दौर की राजनीति में वयस्क मताधिकार की

सम्पूर्ण संभावनाओं का प्रयोग होते हुए प्रतीत होता है। एक तरह से लोकतंत्र वोट की राजनीति में परिणित हो गया। समाज के निचले वर्गों के लोगों का व्यापक राजनीतिकरण और भागीदारी इस दौर की सबसे बड़ी उपलब्धि थी। खास तौर से राज्य और स्थानीय स्तर के चुनावों में शहरी मध्यवर्गों के बीच चुनावों के प्रति उदासीनता का भाव गहरा होने लगा। क्षेत्रीय मुद्दे भारतीय राजनीति को प्रभावित करने लगी। राष्ट्रीय मुद्दे क्षेत्रीय मुद्दे के आगे धूमिल हो गये।

वास्तव में, ये परिस्थितियॉ भारतीय राजनीति में गठबंधन की राजनीति के दौर का आगाज था। शासन करने की यह गठबंधन की रणनीति चार मुख्य अस्त्रों– साम, दाम, दण्ड, भेद से शुरू होती है। वैसे तो गठबंधन की राजनीति 1977 से शुरू होती है। लेकिन सत्ता के लिए दलों में आपसी प्रतिस्पर्धा के कारण जनता दल बिखर जाती है तथा पुनः इन्दिरा गॉधी को स्पष्ट बहुमत मिलता है। 1984 में इंदिरा गॉधी की हत्या के बाद राजीव गॉधी को सहानुभूति के आधार पर स्पष्ट बहुमत प्राप्त होता है लेकिन इस चुनाव के बाद गठबंधन के विकृत रूप भारतीय राजनीति में उभरने लगती है।

गठबंधन का दूसरा दौर बी0पी0 सिंह के नेतृत्व में प्रारम्भ होती है। अपनी निहित स्वार्थों के कारण यह सरकार भारतीय जनता पार्टी के समर्थन की वापसी से गिर जाती है फिर चन्द्रशेखर के नेतृत्व में सरकार का गठन होता है। चन्द्रशेखर सरकार के पास मात्र 84 सदस्य थे, कांग्रेस के समर्थन से उनकी सरकार बन जाती तो उसकी भी हालत चौधरी चरण सिंह की तरह होता। राजीव गॉधी की हत्या के बाद कांग्रेस सत्ता में आती है लेकिन ये भी सरकार अल्पमत में ही थी पी0वी0 नरसिम्हाराव ने अन्य दलों के गठजोड़ के बल पर सरकार का गठन किया। इसी दौर में कांग्रेसी अल्पमत सरकार को बचाने के लिए सांसदों की खरीद फरोख्त का आरोप तत्कालीन प्रधानमंत्री के उपर लगा था। 1996 में भाजपा और उसके मित्र दलों (शिवसेना और अकाली दल) को 200 सीटें प्राप्त हुई, लेकिन पूर्ण बहुमत नहीं मिला फिर भी बड़ी पार्टी के रूप में भाजपा को सरकार गठन के लिए राष्ट्रपति ने मनोनीत किया लेकिन बहुमत सिद्ध न होने के कारण मात्र यह सरकार 13 दिन में गिर गयी।

तत्पश्चात कांग्रेस के समर्थन से संयुक्त मोर्चा (जनता दल, भाकपा, माकपा, तमिल मनीला कांग्रेस, द्रमुक, तेलगु देशम पार्टी, समाजवादी पार्टी, तिवारी कांग्रेस, फारवर्ड ब्लाक आदि) देवगौड़ा के नेतृत्व में सरकार का गठन हुआ लेकिन तत्कालीन कांग्रेस अध्यक्ष सीताराम केसरी ने 10 माह बाद समर्थन वापस लेने की घोषणा कर दी लेकिन नेता बदलने के शर्त पर फिर से समर्थन देने के लिए तैयार हो गये। इन्द्र कुमार गुजराल को प्रधानमंत्री बनाया गया। 1997 के अंत तक कांग्रेस पुनः समर्थन वापस लेकर सरकार को अल्पमत में ला दिया अन्ततः लोकसभा भंग हो गयी। 1998 में पुनः आम लोक सभा चुनाव में भाजपा ने अपने कुल 18 दलों के सहयोग से वाजपेयी के नेतृत्व में सरकार का गठन किया। जयललिता के समर्थन वापस लेने के कारण मात्र एक मत से सरकार गिर गयी। इस सरकार के गिरने के बाद भाजपा और कांग्रेसवाद के नाम पर गठबंधन करके सरकार बनाने की कोशिश की गयी लेकिन सफलता नहीं मिली।

13वीं लोकसभा चुनाव के पूर्व भाजपा ने अपने मित्र दलों के साथ गठबंधन करके राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन बनाया जिसमें 24 दल थे। वहीं कांग्रेस ने गैर भाजपा के नाम पर संप्रग दल का निर्माण यिका। 1999 के आम चुनाव में राजग को बहुमत प्राप्त हुआ और बाजपेयी के नेतृत्व में सरकार का गठन हुआ। लेकिन 2004 के चुनाव में महॅगाई के मुद्दे पर आम जनता कांग्रेस गठित संप्रग दल को सत्ता में वापसी करती है। इस तरह से संप्रग कांग्रेस का शासन 10 वर्षों तक रहता है। 30 वर्ष तक भारतीय राजनीति में गठबंधन की राजनीति में दोनों राष्ट्रीय दलों के सीटों में जो उतार–चढ़ाव आया उसका आकलन नीचे दिये गये तालिका में दिखाया जा सकता है।

तालिका नं0 01–1

सन्	8वीं 1984		9वीं 1989		10वीं 1991		11वीं 1996		12वीं 1998	
दल	भाजपा	कांग्रेस	भाजपा	कांग्रेस	भाजपा	कांग्रेस	भाजपा	कांग्रेस	भाजपा	कांग्रेस
सीट	02	415	86	197	120	232	161	140	182	141
मत प्रतिशत	7.4	48.1	11.5	39.5	20.19	36.15	20.20	28.8	23.75	25.8
सन्	13वीं 1991		14वीं 2004		15वीं 2009		16वीं 2014		स्रोत– दैनिक जागरण (जनादेश) गोरखपुर, संस्करण 17 मई 2014 पृ0सं0 15	
दल	भाजपा	कांग्रेस	भाजपा	कांग्रेस	भाजपा	कांग्रेस	भाजपा	कांग्रेस		
सीट	182	11.4	130	145	116	206	282	44		
मत	23.75	28.3	22.66	26.53	18.8	28.5	31.4	19.5		

30 वर्षों में कांग्रेस और भाजपा के ऑकड़ों का अवलोकन करने के बाद यह स्पष्ट हो जाता है कि भारतीय जनता पार्टी में किस तरह से गठबंधन की राजनीति के कारण अस्थिरता का माहौल बन गया है। देश के समक्ष महॅगाई, भ्रष्टाचार, ब्लैक मेलिंग की राजनीति, विकास दर में ठहराव, पंथनिरपेक्षता के आड़ में सांप्रदायिकता की राजनीति, क्षेत्रीयता, नेतृत्व विहिनता का माहौल, जातिगत राजनीति, वंशवाद के जड़ का मजबूत होना, भाई–भतीजावाद, धनबल, बाहुबल, कार्पोरेट घरानों का वर्चस्व, इत्यादि चुनौतियों कमजोर शासन के कारण उभर गयी थी। वैदेशिक क्षेत्र में मनमोहन सिंह के सरकार के 10 वर्षों का कमजोर प्रशासन भारत की छवि को एक असहाय देश के रूप में इंगित करता है। एक तरह से जातिगत क्षेत्रीय और सांप्रदायिक विद्वेष की भावना को उभारकर वोट बैंक की राजनीति करना राजनीतिक दल का युग धर्म बन गया है। 16वीं लोक सभा चुनाव में तो बहुसंख्यक बनाम अल्पसंख्यक के मुद्दे उभारने में गैर भाजपा दलों ने कोई कसर नहीं छोड़ा, सारी सीमाएँ तोड़ दी। देश के संसदीय लोकतंत्र के 30 सालों के इतिहास में अब तक ऐसा नहीं हुआ कि किसी राजनीतिक दल को 282 सीट प्राप्त हुआ हो। यह आश्चर्य की बात है कि जो दल अपने को जनता से जोड़े रखने की बात करते थे वे उनकी आकांक्षाओं से मुँह मोड़ते रहे जो जनता को चैतन्यता तक ले गया। यही नहीं पिछले एक दशक से विख्यात अर्थशास्त्री प्रधानमंत्री तथा पदमोह से मुक्त सोनिया गॉधी के नेतृत्व देश को मिला तो जनता की संयम की परीक्षा हो गयी। भ्रष्टाचार विरोधी अभियान चाहे अन्ना हजारे का हो चाहे बाबा रामदेव का या श्री श्री रविशंकर का सभी ने समाज में संचेतना भरी जिसमें धर्मनिरपेक्षता की आड़ में किए जा रहे अनैतिक आचरण को नाकाम कर दिया। संभवतः यह पहला चुनाव है जिसमें धर्मनिरपेक्षता के नाम पर सांप्रदायिक ध्रुवीकरण के प्रयास को पूरी तरह बेनकाब कर दिया। इस चुनाव में नरेन्द्र मोदी और गुजरात मॉडल चर्चा के केन्द्र में बने रहे। चुनाव प्रचार में भारतीय जनता पार्टी ने नरेन्द्र मोदी को आगे करके उनके व्यक्तित्व और विकास के मुद्दे पर आक्रामक रूख अपनाया। इसी का परिणाम था कि लगभग साढ़े तीन मतदाता में से एक ने अपने प्रतिनिधि के रूप मे भाजपा के प्रत्याशी का चयन किया जबकि 10 में से चार से कम लोगों ने राजग प्रत्याशियों को अपना मत दिया, वहीं कांग्रेस 19.3 प्रतिशत मत प्राप्त करने के साथ 44 सीट जीत सकी। यह विडम्बना ही है कि 2009 के चुनाव में भाजपा का मत प्रतिशत 18.5 था जो 16 वीं लोकसभा में मिली कांग्रेस के मत प्रतिशत के लगभग 14 कम थी। जब 2009 में भाजपा को 116 सीटें प्राप्त हुई थी लेकिन 16वीं लोकसभा चुनाव में रिकार्ड मतदान 66. 38 हुआ जो 35 राज्यों और केन्द्रशासित प्रदेशों में से

16 राज्यों में महिलाओं का मत प्रतिशत पुरूषों की अपेक्षा अधिक रहा। अभी तक जो धारणा बनी थी कि विधान सभा व स्थानीय निकाय चुनावों की अपेक्षा आम चुनाव में महिलाओं की भागीदारी बहुत कम होती है। परन्तु 16वीं लोकसभा चुनाव इस धारणा को खण्डित कर दिया।

बिहार, पंजाब, तमिलनाडु, उड़ीसा जैसे घनी आबादी वाले राज्य की महिलाओं ने पुरूषों को पीछे छोड़ दिया। भारतीय राजनीति में अब तक के चुनावों की अपेक्षा इस चुनाव में महिलाओं की राजनीतिक चेतना बढ़ी है। स्थानीय ही नहीं राष्ट्रीय स्तर पर भी उनकी स्वतंत्र राय विकसित हो रही है। पंच सरपंच और राज्य का मुख्यमंत्री ही नहीं देश का प्रधानमंत्री चुनने में भी सक्रिय दखल देने में सक्षम हुई हैं। पिछले लोकसभा चुनाव (2009) में 57 शहरी क्षेत्रों में केवल 51.5 प्रतिशत वोट पड़े जबकि राष्ट्रीय औसत 58 प्रतिशत था इस चुनाव में 144 अर्द्ध शहरी क्षेत्रों में 61.2 प्रतिशत तथा ग्रामीण 343 सीटों पर 58.2 प्रतिशत वोट पड़े थे अर्थात कुल मत लगभग 30 प्रतिशत शहरी थे। इस चुनाव में 10 करोड़ युवाओं ने पहली बार मतदान में भाग लिया। इन युवा मतदाताओं (18 से 25 वर्ष) की संख्या बुर्जुग और अधेड़ मतदाताओं की अपेक्षा अधिक है। मतदान केन्द्रों पर महिलाओं, युवाओं, दलितों, आदिवासियों और मुस्लिम आबादी की संख्या बढ़ी है।

वास्तव में, 16वीं लोक सभा चुनावी संस्करण ने विकास और नेतृत्व के मुद्दों के आधार पर भारतीय राजनीति में व्याप्त उन विकृत चुनावी मुद्दों को धाराशायी कर दिया। परिणामों के विश्लेषण के अनुसार न केवल उत्तर प्रदेश और बिहार की 120 सीटों में से राजग को 101 सीटों के मिलने का कारण भी जातिगत और विकास का समीकरण है।

चुनाव ऑकड़े, भारत के संसदीय चुनाव 1952–2014

वर्ष	निर्वाचन क्षेत्र	उम्मीदवार	मतदान केन्द्र	मतदाता (प्रति दस लाख में)	मतदान हुए (प्रति दस लाख में)	मतदान प्रतिशत
1952	489	1874	132560	173.2	79.1	45.7
1957	494	1519	220478	193.7	92.4	47.7
1962	494	1985	238355	217.7	120.6	55.4
1967	520	2369	267555	250.6	153.6	61.3
1971	518	2784	342944	274.1	151.6	55.3
1977	542	2439	373908	321.2	194.3	60.5
1980	529	4629	434742	363.9	202.7	56.9
1984	542	5493	479214	400.1	256.5	64.1
1989	529	6160	579810	498.9	309.1	62.1
1991	534	8780	588714	511.5	285.9	55.9
1996	543	13952	767462	592.6	343.3	57.9
1998	539	4708	765473	602.3	373.7	62.0
1999	543	4668	774651	619.5	371.7	60.0
2004	543	5435	687402	671.5	389.9	58.1
2009	543		828804	716.0		56.9
2014	543		930000	814.0		66.4

डाटा यूनिट, सी0एम0डी0एस0 दिल्ली तथा भारत निर्वाचन आयोग

(1999, 2004, 2009, 2014)

उपरोक्त तालिका से पता चलता है कि 2014 के चुनाव में मतदान प्रतिशत में बहुत ज्यादा वृद्धि हुई। चुनाव का एक अन्य महत्वपूर्ण रणनीतिक सबक है सोशल मिडिया, इण्टरनेट, गूगल, फेसबुक, ट्विटर, यूट्यूब का प्रयोग। नरेन्द्र मोदी तथा उनकी टीम ने इसका उपयोग अपने चुनाव अभियानों के संयोजन तथा आवाम तक अपनी बात पहुँचाने खासतौर पर मध्यमवर्गीय शहरी, शिक्षित जनता तक ले जाने में सफलतापूर्वक प्रयोग किया। इस तरह से आर्थिक स्तर पर चुनाव सुधार की प्रक्रिया में सोशल मिडिया एक बड़ा हथियार साबित हो सकता है। नरेन्द्र मोदी ने 9 महीने में लगभग 3 लाख किमी0 की यात्रा, 5187 सभा समारोहों 25 राज्यों में 477 रैलियों का संबोधन अनुमानित 2.3 करोड़ लोगों से थ्री डी, इण्टरनेट, मोबाइल, टेलीफोन से सम्पर्क करके एक नया रिकार्ड बनाया। मोदी के चुनाव अभियान में आर0एस0एस0 की सक्रिय भागीदारी प्रमुख थी लेकिन हिंदुत्व की अपनी कट्टर छवि के बावजूद कट्टर दक्षिणपंथी एजेण्डे से दूरी बनाए रखा और जाति धर्म के राजनीति से हटकर समावेशी राजनीति को प्रमुखता दी। 17 अप्रैल से लेकर 12 मई के मध्य सम्पन्न हुए 9 चरणों की चुनावी प्रक्रिया के चुनावी खर्च एक लाख करोड़ तक पहुँच गया। इसमें चुनाव आयोग का खर्च 3500 करोड़ है। उम्मीदवारों के प्रचार कार्य पर 30 हजार करोड़ खर्च होने का अनुमान है। प्रचार कार्य में 400 हेलीकाप्टर और 20 विमान इस्तेमाल हुए। एक तरह से यह चुनाव विश्व की सबसे महँगी चुनावी युग और मोदी दौर के युग से जानी जाएगी।

भारत के 15वे प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी पर किसी का दबाव नहीं है– न अपनी पार्टी का, न सहयोगी दलों का न संघ का लेकिन उनके समक्ष संप्रग सरकार के कुशासन, अकर्मण्यता से उत्पन्न विभिन्न चुनौतियॉ खड़ी है जिनमें ढॉचागत क्षेत्र, महँगाई, भ्रष्टाचार, उद्योग रोजगार, कृषि शिक्षा और स्वास्थ्य प्रमुख हैं। कलराज मिश्र और नजमा हेपतुल्ला को छोड़कर मोदी मंत्रिमंडल के सभी मंत्री आजादी के बाद पैदा हुए हैं इस चुनाव में मुसलमान सांसदों की संख्या 23 है। उ0प्र0 से एक भी मुसलमान सांसद नहीं है फिर भी यह कहा जा सकता है कि नरेन्द्र मोदी ने सभी का साथ और सभी के विकास की बात को ध्यान में रखते हुए एक समावेशी बजट की रूपरेखा के माध्यम से एक सशक्त लोकतांत्रिक देश के रूप में भारत को स्थापित करने की पहल की इसके साथ ही यह स्पष्ट कर दिया कि भारतीय लोकतंत्र रूपी वृक्ष में सड़े–गले फल रूपी विकृतियॉ भी भारतीय लोकतंत्र की जड़े कमजोर नहीं कर सकती। फिर भी भारतीय लोकतंत्र में तमाम असंगतियॉ है जो निम्न हैं:–

1. देश का राष्ट्रपति या प्रधानमंत्री अनपढ़ हो सकता है लेकिन उनके साथ तैनात सभी निचले स्तर के कर्मचारी के लिए न्यूनतम शैक्षिक योग्यता निर्धारित है।
2. संसद में महिलाओं तथा युवाओं के प्रतिनिधित्व का प्रतिशत कम है।
3. भारतीय लोकतंत्र के मतदाता जेल में रहते हुए वोट नहीं डाल सकता है किन्तु प्रत्याशी जेल में रहते हुए चुनाव लड़ सकते हैं।
4. हम एक स्थान पर वोट डाल सकते हैं और उम्मीदवार एक से अधिक चुनाव लड़ सकते हैं।
5. नोटा (**NOTA**) के प्रति जनता में उदासीनता उन्हें जागरूक करने की जरूरत।
6. ***Right to Recall*** का अधिकार भारतीय जनता को मिलना।

उक्त विसंगतियों को खत्म कर दिया जाए तो हम एक सशक्त भारतीय लोकतंत्र के रूप में विश्व का

मार्गदर्शन कर सकते हैं वास्तव में लोकतांत्रिक सफर को व्यवहारों की अव्यवस्था के रूप में रेखांकित किया जा सकता है। अव्यवस्था और व्यवस्था को एक दूसरे का विरोधी माना जाता है लेकिन भारत में ये एक ही सिक्के के दो पहलू प्रदर्शित होते हैं। इन्हीं सब कारणों से इसको 'कार्यात्मक अराजकता' 'प्रिय अव्यवस्था' और 'लाखों विद्रोहों की भूमि' कहा जाता है। भारतीय मॉडल की प्रतिकृति मिलना मुश्किल है। ऐसी प्रतिकृति भारत ही बना सकता है क्योंकि यह एक 'परिपूर्ण वृत्त' की तरह है और इसका प्रदर्शन गैर–रेखीय है लोकतंत्र कभी परिपूर्ण नहीं हो सकता। यह एकमात्र असहमतियों और अपूर्णताओं की एक दशा मात्र है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

1. राजीव रंजन 'चुनाव लोकसभा और राजनीति' ज्ञानगंगा प्रकाशन दिल्ली, पृ0सं0 73–83
2. योजना– 'लोकतंत्र एवं चुनाव सुधार' संपादन– राजेश कुमार झा, 538 योजना भवन, संसद मार्ग, नई दिल्ली, जुलाई 2014
3. सईद म0एस0 भारतीय राजनीतिक व्यवस्था, सुलभ प्रकाशन, लखनऊ 2001
4. स्वतंत्र चेतना गोरखपुर 17 मई 2014 पृ0सं0 8 संपादकीय।
5. आज (समाचार पत्र) गोरखपुर 17 मई 2014 पृ0सं0 8, 6
6. दैनिक जागरण गोरखपुर 9 अप्रैल 2014 पृ0सं0 10
7. दैनिक जागरण गोरखपुर मई 2014 मुद्दा पृ0सं0 15
8. इण्डिया टूडे, 21 मई 2014 आवरण कथा– अलबेला चुनाव पृ0सं0 14
9. सब लोग राष्ट्रीय मासिक पत्रिका जून 2014 'नयी सरकार नयी चुनौतियॉ' पृ0सं0 8–9.